P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4* (Part-1) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

जिम्मेदारी से दूर भागते शिक्षा संस्थान

दिनेश प्रताप सिंह
सहायक प्राध्यापक,
शिक्षा संकाय,

सारांश

इस समय देश में शिक्षा की गुणवत्ता पर विमर्श पीछे चला गया है, उसका स्थान शिक्षा प्रदान करने वाले केंद्रों–स्कूलों से लेकर उच्च शिक्षा संस्थानों के परिसरों में निर्मित वातावरण ने ले लिया है। आज शिक्षा केंद्रों में जो समस्याएं लगातार उभरती रहती हैं उनके मूल में शिक्षा के शाश्वत आदर्शों से भटकाव, अध्यापक और शिष्य के संबंधों से आत्मीयता की अनुपस्थिति और उत्तरदायित्व, श्रद्धा और पारस्परिक आदर भाव की कमी ही मुख्य कारक के रूप में पहचाने जा सकते हैं। यह समाज और सरकार का सम्मिलित उत्तरदायित्व है कि ज्ञानार्जन में रुचि लेने वाले, छात्रों के प्रति स्नेह संबंध बनाने को उत्सुक, अध्यापन को दूसरों का जीवन संवारने का अवसर मानने वाले, चरित्र और व्यक्तित्व के प्रति सदा सजग और सावधान रहने वाले उत्साही व्यक्ति ही अध्यापक बनने के योग्य माने जाएं।

मुख्य शब्द : अनियमितताओं, परिलक्षित, अस्वीकार्य, सहानुभूति।

प्रस्तावना

इस समय देश में शिक्षा की गुणवत्ता पर विमर्श पीछे चला गया है, उसका स्थान शिक्षा प्रदान करने वाले केंद्रों–स्कूलों से लेकर उच्च शिक्षा संस्थानों के परिसरों में निर्मित वातावरण ने ले लिया है। स्कूलों में मासूम बच्चों की हत्याएं, दुष्कर्म, हिंसा की घटनाएं लगातार सभी को चिंतित कर रही हैं। अनेक बार शिक्षा संस्थानों में कई प्रकार की अनियमितताओं की चर्चा तो होती ही रहती है, मगर यहां महिला उत्पीड़न की घटनाएं अत्यंत विचलित करने वाली होती हैं। गुरु और शिष्य के संबंधों में जबरदस्त बदलाव हुआ है जो आज स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालयों तक में घट रही अस्वीकार्य और शर्मनाक स्तर तक नैतिकता के क्षारण से परिलक्षित होती है। स्वामी विवेकानंद ने गुरु और शिष्य को लेकर कहा था, 'जिस व्यक्ति की आत्मा से दूसरी आत्मा में शक्ति का संचार होता है वह गुरु कहलाता है और जिसकी आत्मा में यह शक्ति संचारित होती है उसे शिष्य कहते हैं। किसी भी आत्मा में इस प्रकार शक्ति संचार करने के लिए जरुरी है कि पहले तो जिस आत्मा द्वारा संचार होता हो उसमें इस संचार की शक्ति मौजूद रहे और दूसरे जिसमें यह शक्ति संचारित की जाए, वह इसे ग्रहण करने योग्य हो। ऐसे व्यक्ति ही सच्चे गुरु होते हैं और ऐसे व्यक्ति ही सच्चे शिष्य या आदर्श साधक कहलाते हैं।' उनके अनुसार सच्चे आचार्य वे ही हैं जो अपने शिष्य की प्रवृत्ति के अनुसार अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग कर सकें। सच्ची सहानुभूति के बिना हम कभी भी ठीक–ठीक शिक्षा नहीं दे सकते हैं।' यह आचार्य वे ही हैं जो अपने शिष्य की प्रवृत्ति के अनुसार 'सच्चे आचार्य वे ही हैं जो अपने शिष्य की प्रवृत्ति के अनुसार अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग कर सकें। सच्ची सहानुभूति के बिना हम कभी भी ठीक–ठीक शिक्षा नहीं दे सकते हैं।' यह अपेक्षा करना तो तर्कसंगत ही माना जाना चाहिए कि कुलपति और आचार्य पद को सुशोभित करने वालों को आचरण, ज्ञानार्जन में लगन और शिष्यों के समक्ष अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत करने ही होंगे। आज की व्यवस्था में यह सब बहुत हद तक भुला दिया गया है। हमने इस देश में पनपे चिंतन और विचारों को त्याग कर बाहर से नकल करने की प्रवृत्ति को ही देशहित मान लिया है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. संस्थाओ में शिक्षा की स्थिति का अध्ययन।
2. शैक्षिक संस्थाओ की वास्तविक सुविधाओ का अध्ययन
3. संस्थाओ में प्रदान की जा रही सुविधाओ का अध्ययन।
4. संस्थाओ में वास्तविक अधिगम मूल्याकन का अध्ययन।

आज शिक्षा केंद्रों में जो समस्याएं लगातार उभरती रहती हैं उनके मूल में शिक्षा के शाश्वत आदर्शों से भटकाव, अध्यापक और शिष्य के संबंधों से आत्मीयता की अनुपस्थिति और उत्तरदायित्व, श्रद्धा और पारस्परिक आदर भाव की कमी ही मुख्य कारक के रूप में पहचाने जा सकते हैं। यह समाज और

सरकार का सम्मिलित उत्तरदायित्व है कि ज्ञानार्जन में रुचि लेने वाले, छात्रों के प्रति स्नेह संबंध बनाने को उत्सुक, अध्यापन को दूसरों का जीवन संवारने का अवसर मानने वाले, चरित्र और व्यक्तित्व के प्रति सदा सजग और सावधान रहने वाले उत्साही व्यक्ति ही अध्यापक बनने के योग्य माने जाएं। इसी तरह हर शिष्य हर प्रकार की शिक्षा के योग्य नहीं हो सकता है, उसकी अपनी रुचि के क्षेत्र में ही उसे अवसर दिए जाएं। यह दोनों पक्ष उस समय पूरी तरह से व्यावहारिक परिदृश्य से ओझल हो गए हैं या यों कहें कि परिस्थितियों ने उन्हें पीछे धकेल दिया है। परिणामस्वरूप हमारी ज्ञानार्जन, नवाचार और शोध के महत्व को समझने की क्षमता ही शिथिल पड़ गई है। अब अधिकांश शिक्षा केंद्र केवल वार्षिक परीक्षाओं में अधिकाधिक अंक प्राप्त कराने में ही अपनी सारी ऊर्जा लगा देते हैं। मानव मूल्यों से परिचय और बच्चों द्वारा व्यक्तिगत स्तर पर उन्हें हृदयंगम करना और इसमें उनकी सहायता करना अब अध्यापक तथा संस्थाएं अपना उत्तरदायित्व नहीं मान रहे हैं। अध्यापक अक्सर स्वयं भी भूल जाते हैं कि उसके आचार, विचार, व्यवहार और चरित्र का बच्चे लगातार अवलोकन करते रहते हैं और उसे अपना 'आइकॉन' मानने को उत्सुक रहते हैं।

अपेक्षा तो यही थी कि जैसे–जैसे शिक्षा का व्यापक फैलाव होगा, शिक्षित समाज अपने कर्तव्यों का पालन निष्ठापूर्वक करेगा। 19–20 प्रतिशत से बढ़कर आज साक्षरता तीन चौथाई आबादी तक पहुंच गई हैं जो अपने आप में बड़ी उपलब्धि है। शिक्षा केंद्रों में जो दृष्टिकोण परिवर्तन उन्हें चलाने के लिए जिम्मेदार लोगों में सबसे अधिक देखा जा सकता है वह 'वर्तमान स्थिति को सामान्य' मान लेने का प्रचलन है। किसी भी गतिशील व्यवस्था के लिए यह उसमें लगे दीपक की तरह है जिससे निजात पाना उसके बने और बचे रहने के लिए आवश्यक है। दिल्ली के एक स्कूल के शौचालय में सात साल के बच्चे की हत्या और पंडित मदनमोहन मालवीय द्वारा स्थापित किए गए बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में एक छात्रा से शाम को छह बजे छेड़छाड़ वैसे तो अलग–अलग घटनाएं हैं, इनकी प्रकृति अलग–अलग है, मगर मानवीय व्यवहार का एक तत्व इन दोनों में समान रूप से उपस्थित है। मसलन अध्यापकों और छात्रों के बीच संवेदनात्मक स्तर पर जिन संबंधों की संकल्पना प्राचीन भारतीय संस्कृति में की गई थी, उसका लगभग पूरी तरह तिरोहित हो जाना यदि ऐसा न होता तो गुरुग्राम का स्कूल अपने बच्चों की सुरक्षा को पूरी तरह दरकिनार न कर देता, दुर्घटना के बाद अपनी जिम्मेदारी से न भागता और साक्ष्य मिटाने का प्रयास न करता। उसी प्रकार बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में उस छात्रा से तुरंत संवाद स्थापित कर उस घटना का समाधान किया जा सकता था, उसे और सभी छात्रों को विश्वास दिलाया जा सकता था कि आगे से उनकी सुरक्षा में कोई कोताही नहीं होगी। क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है कि छात्राओं को रात में अंधेरी सड़कों पर रोशनी का प्रबंध करने के लिए धरने पर बैठना पड़े? स्थिति इतनी बिगड़े कि पुलिस आए और लड़कियों को 'लाठी चार्ज' में चोट लगे? छेड़–छाड़ की घटना के बाद यह कहना कि 'क्यों वहां गई थी' एक विकृत मानसिकता में ही संभव है जिसकी शिक्षा संस्थानों में कोई स्थान हो ही नहीं सकता है।

निष्कर्ष

भारत की प्राचीन ज्ञानार्जन परंपरा पर भारतीयों को गर्व होना ही चाहिए। जिस बड़े पटल पर ज्ञान की खोज भारत के मनीषियों ने की थी उसकी संकल्पना तक अन्य सभ्यताओं में उस समय नहीं की थी। जिस विधा को ज्ञानार्जन और उसके अगली पीढ़ी तक स्थानांतरण को भारतीयों ने एक सक्षम स्वरूप दिया था वह आज भी उतनी ही समसामयिक हैं जितनी हजारों साल पहले थी। इसे स्वामी विवेकानंद, श्री अरबिंदों, गुरुदेव टैगोर और गांधी जैसों ने पहचाना था। उन विचारों से शिक्षा जगत से जुड़े लोगों को परिचित होना चाहिए। शिक्षा केंद्रों में समन्वय और आत्मीयता का जो वातावरण आवश्य है वह अब केवल इतिहास मात्र बनकर रह गया है। गुरुदेव टैगोर ने जब शांति निकेतन की संकल्पना की थी तो उनके मन में रचनात्मकता, विचारों की शक्ति और कल्पना शक्ति को पंख प्रदान करने की अभिलाषा सबसे प्रमुख थी। उनका मानना था कि शिक्षा केंद्रों का पहला उद्देश्य शिक्षा देना नहीं वरन शिक्षा प्राप्त कर सकने के लिए आवश्यक वातावरण निर्मित करना होना चाहिए। यह सुधारों के लिए सूत्र–वाक्य बन सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *संपादकीय हिन्दुस्थान, दिनांक 18 सितम्बर 2018 मेरठ*
2. *लाल, रमन बिहारीः भारतीय शिक्षा की समस्याये, आर लाल पब्लिकेशन मेरठ*
3. *शर्मा आर. ए. : शिक्षा तकनीकी, आर लाल पब्लिकेशन मेरठ*
4. *पाठक, पी.डी.: भारतीय शिक्षा की समस्याये, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा*
5. *शर्मा, आर. ए. : शिक्षा और उसका इतिहास, आर लाल पब्लिकेशन मेरठ*